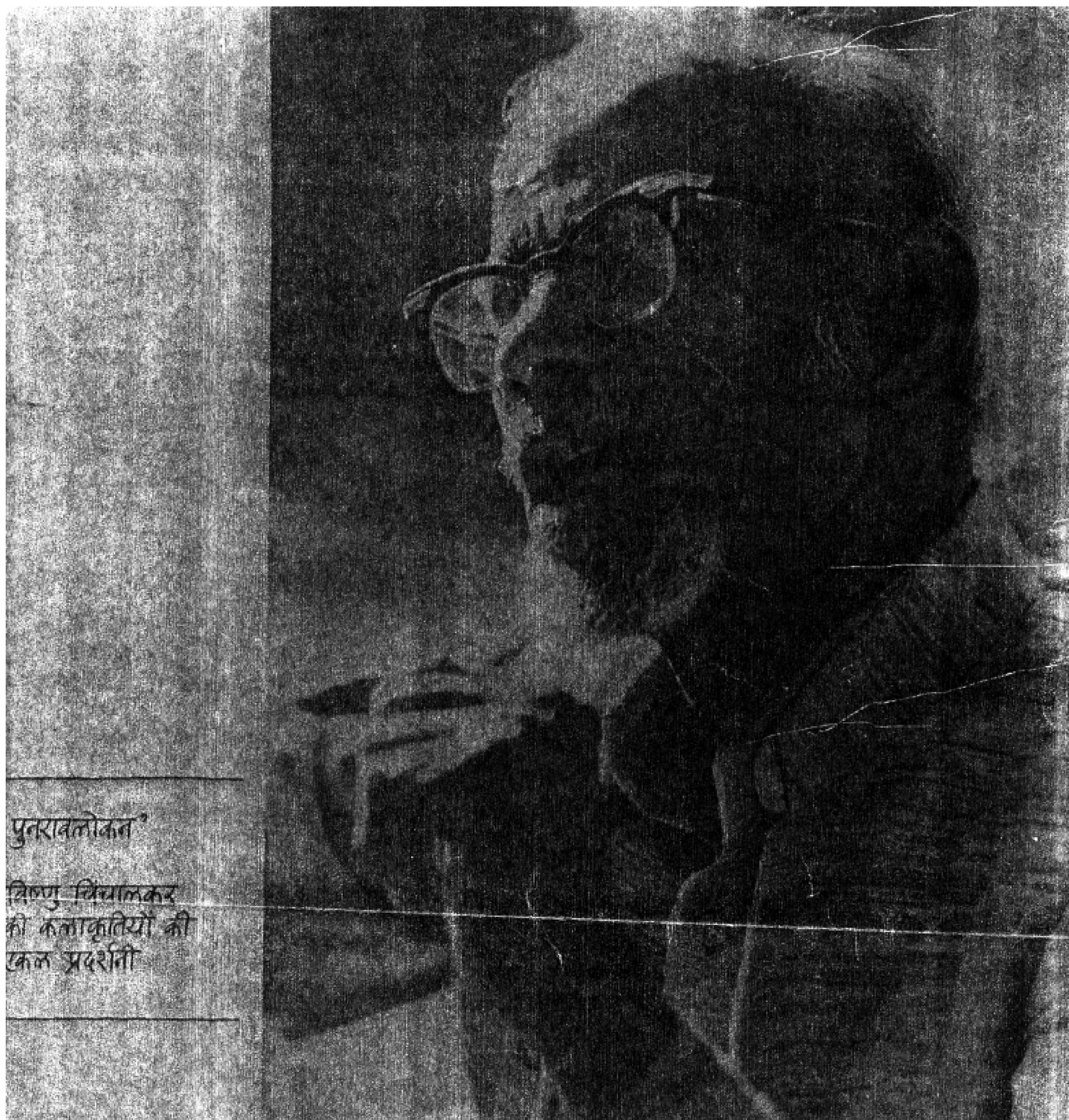
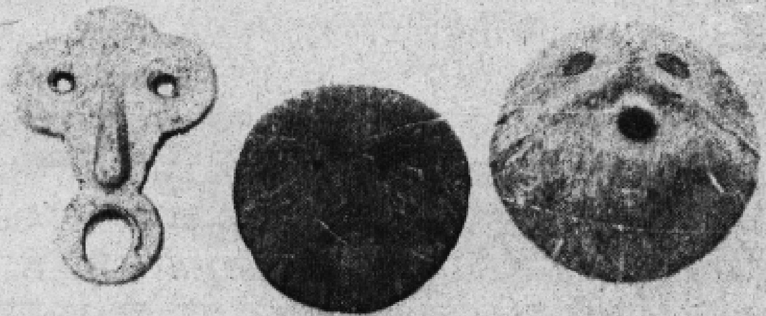


पुनरावलोकन’
विष्णु चिचालकर
की कलाकृतियों की
एकल प्रदर्शनी



तो भई, पढ़ूँ अब ?
"हाँ।" दो - तीन जन एक साथ बोले ।
कुछ खाँस कर मैंने गला साफ़ किया और शुरू हुआ :

श्री विष्णुपंत दिनकरपंत चिंचालकर उर्फ़ गुरुजी। देवास के बाशिन्दे । जन्मतारीख ५ सितम्बर १९१७ । इस तारीख को आजकल शिक्षक-दिवस के रूप में मनाया जाता है। गुरुजी ने अपनी ज़िन्दगी शिक्षक बनकर ही शुरू की। मैट्रिक पास करके देवास की एक प्राथमिक शाला में ग्यारह रुपये माहवार पर वे मास्टरी करने लगे । कुछ वर्षों में ही हेडमास्टर हो गए और तनख्वाह में पूरे चार रुपयों की बढ़ोत्री हुई । फिर वे नौकरी छोड़कर इन्दौर आए और १९५०-५१ से कला महाविद्यालय में पढ़ाने लगे । तभी से उन्हें 'गुरुजी' नाम से सम्बोधित किया जाने लगा ।

यहाँ पर मैंने क़ाग़ज़ पर गड़ी नज़र गुरुजी की ओर उठाकर उनसे पूछा, "ठीक है न गुरुजी ?"
गुरुजी : हाँ, लेकिन तुम्हें एक मज़े की बात बताऊँ ? आज चौंसठ साल की उम्र तक यह गुरुजी सिर्फ़ एक ही शिष्य तय्यार कर सका यार ।
"कौनसा ?" उत्स्फूर्त समूह प्रश्न ।
"उसका नाम है विष्णु ! विष्णु चिंचालकर ।"



हम सब हँस तो दिए मगर कुछ दम नहीं था उस हँसी में।
गुरुजी एक विदारक सत्य बोल गए थे।
गुरुजी ने आम आदमी तक चित्रकारिता का सरल, सुगम स्वरुप पहुँचाने की कोशिश की है। बेकार चीज़ों में से कलात्मक छबियों को कैसे तराशा जा सकता है यह गुरुजी चार दशकों से दिखाते आ रहे हैं। मगर अफ़सोस यही है कि दर्शकों की आँखें कुछ न सीख पाईं। किसी की रबड़ की चप्पल का बन्द टूटते ही उसे बस गुरुजी की टूटी चप्पल से बनी 'मोनालिसा' याद आ जाती है और वह अपनी चप्पल उन्हें भेंट स्वरूप दे जाता है। खुद कुछ भी नहीं खोज पाता।

मैं इसी ख़याल में उलझा था कि किसी ने कहा, "आगे पढ़ना।"



"बचपन से ही गुरुजी चित्र बनाने लगे थे। भोजन और शयन जैसा ही सहज था उनका रेखाओं का अंकन। १९३५ में गुरुजी ने इन्दौर आकर चित्रकला विद्यालय में प्रवेश लिया और गुरु देवलालीकर के मार्गदर्शन में चित्रकला का अध्ययन शुरू किया। आगे चलकर अपने शिक्षक से तीव्र मतभेद होने के कारण विद्यालय छोड़ दिया और स्वतंत्र रुप से तैयारी करके, चौबीस वर्ष की आयु में – मतलब १९४१ में – गुरुजी बम्बई से जी.डी. का इम्तहान पास कर आए। १९४३ से १९५०, इस अन्तराल में गुरुजी ने दिल्ली, बम्बई और कलकत्ता में हुई अखिल भारतीय प्रदर्शनियों में तथा दिल्ली की अन्तर्राष्ट्रीय चित्र प्रदर्शनी में प्रशस्तिपत्र और पुरस्कार प्राप्त किए।

Illustrated Weekly of India के तत्कालीन सम्पादक माइकेल ब्राउन गुरुजी के रेखांकन से इतने अधिक प्रभावित हुए कि चित्रकार के प्रदेश के बाहर स्थित होने के बावजूद उन्होंने गुरुजी को कई कहानियों के लिए चित्र बनाने का काम सौंपा। इसके बाद ..."





"उसके बाद की बात बाद में।" राहुल बारपुते बोले। "गुरुजी का कलकत्ते का क़िस्सा आना ही चाहिए यार इस लेख में।"

पु.ल. देशपांडे : वो क्या क़िस्सा है गुरुजी ?

गुरुजी : कलकत्ते की अकादमी की अध्यक्षा लेडी रानू मुकर्जी ने मुझे लिखा कि आपकी कलाकृतियों पर हमने आपको छात्रवृत्ति प्रदान की है। कृपया कलकत्ते आइए। मेरे पास तो रेलभाड़े के पैसे भी नहीं थे। जैसे-तैसे कलकत्ता पहुँचा। मुझे देखकर संयोजक मण्डली हैरत में आ गई। एक मामूली व्यक्तित्व का दुबला-पतला युवक इतनी परिपक्व शैली की कृतियों का निर्माता हो सकता है, इस पर पहले तो उन्हें क़तई विश्वास नहीं हुआ। जब हुआ तो वे उत्साह से ऐसे उछले कि पूछो मत। उस प्रदर्शनी में मैं खुद एक 'एक्ज़ीबिट' बन गया। मेरे निवास की व्यवस्था एक भव्य-भवन में की गई। टीन का टूटा हुआ बक्सा लेकर उस आलीशान बंगले में रहने गया भैय्या मैं। दाढ़ी बनाते समय बाथरूम का दरवाज़ा ठीक से बन्द हुआ या नहीं यह मैं बार-बार देख लेता। इसलिए कि हजामत का सामान बेहद घटिया था। एक पुराना उस्तरा, उसे धारदार बनाने के लिए टोपी के भीतर लगाई जाने वाली चमड़े की पतली पट्टी और स्लेट का टुकड़ा, और दरवाज़ों को जिससे वार्निश करते हैं ना, वह ब्रश। अब बताओ"!

कुमार गंधर्व : मैं बताता हूँ। शायद वहीं से आपके कल्पनालोक में 'कूड़े से कला' प्रकट करने की शुरुआत हुई होगी। भाई, (मतलब पु.ल.देशपांडे) वो सामने देखो। गुरुजी के तम्बाकू के बटुए के पास चूने की जो डिबिया रखी है उसे देखो। हाँ, ये। दाढ़ी बनाने के ब्रश के पेंदे में चूना रखा है और ढक्कन है स्याही की दावात का।

पाण्डु पारनेरकर : गुरुजी का घर तो ऐसे स्वनिर्मित उपकरणों से भरा पड़ा है। अटाले में से अनोखी वस्तुएँ बनाना गुरुजी के हाथ का, नहीं – सही कहूँ तो – उँगलियों का मैल है। आम की गुठली, कुल्फ़ी की डंडी, पुड़िया पर बंधा धागा, टूथपेस्ट की खाली ट्यूब, दीवार से खिसकी हुई चूने की या गोबर की सूखी पपड़ी, फूटी बोतलें और टूटा हुआ फ़र्नीचर कुल मिलाकर सभी खंडित अंग चीज़ों से गुरुजी अभंग और अकल्पनीय कलाकृतियों की सुरम्य झाँकी खड़ी कर देते हैं।

चन्दू नाफ़ड़े : सिर्फ़ यही नहीं कि किसी टूटी-फूटी वस्तु से गुरुजी की कला साकार होती हो। वे तो बिलकुल भिन्न वस्तुएँ इकठ्ठा करके भी ग़ज़ब ढा देते हैं। जैसे उनका बनाया नन्दी बैल। चश्मा रखने की डिबिया के एक ओर काग़ज़ अटकाने की क्लिप फँसाकर उन्होंने जो नन्दी बैल बनाया वह साधारण कलाकार की कल्पनाशक्ति से परे है। मेरी मान्यता ये है कि सभी हस्तकलाओं की आत्मा है सूचकता, सूक्ष्म सूचकता। और आकार (फ़ॉर्म) से एकात्मता पाए बग़ैर ये सूचकता की उल्का पकड़ में आ ही नहीं सकती।



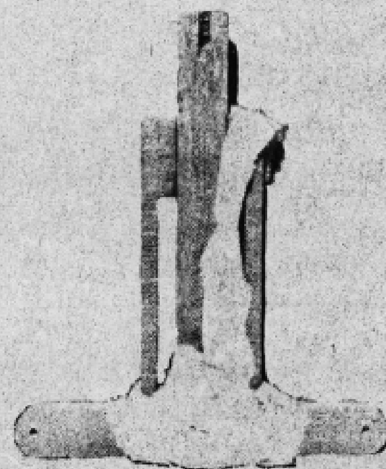
और गुरुजी में जो कलाकार है वह इस 'आकार' की ओर हर घड़ी उन्मुख रहता है।

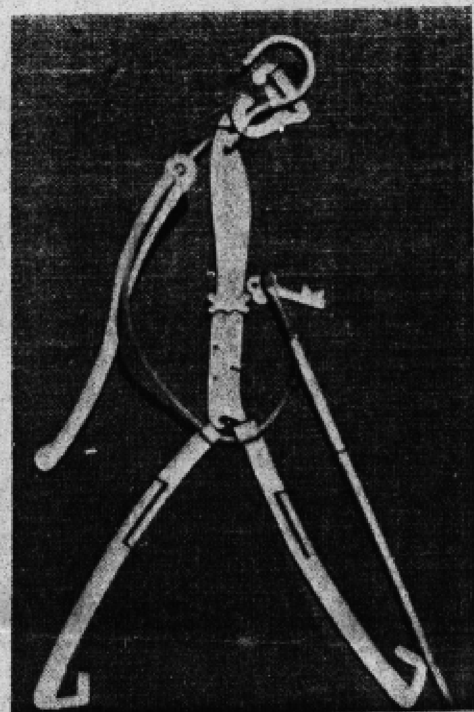
राहुलजी : अरे, कलकत्ते में तो दर्शक रामकृष्ण परमहंस देख कर दंग रह गए। शिल्पकार सुनील दास, उपन्यासकार सुनील गंगोपाध्याय और कवि पार्थसारथी चौधरी सपने में भी नहीं सोच पाए और न पाते कि लकड़ी की कुर्सी की पीठ निकालकर और उलटकर रख दो तो परमहंस स्पष्ट दिखाई देते हैं।

भाई : और बम्बई की प्रदर्शनी में गुरुजी का बनाया ईसा मसीह ! बाहों वाली फटी बनियान से बना ईसा मसीह देखकर वो कलाकार दम्पत्ति...क्या नाम राहुल उनका ?

राहुलजी : होमी और नेली...

भाई : सेठना ! कुमार, होमी सेठना गुरुजी से बोले कि बाईबल में ईसा ने अपना खुद का वर्णन "मैं चियड़ों में हूँ' ऐसा किया है। तो होमी ने कहा कि आजकल ईसा सभी स्थानों पर संगमरमर में ही ढलता है। आपने फटी बनियान में उसे प्रस्तुत किया है। अगर आज वह होता तो आपको दाद देता गुरुजी।





भाई के बखान से हम सब इस घटना को जानते हुए भी हिल गए। एकदम से भावाकुल माहौल। गुरुजी पर लिखी अपनी पंक्तियाँ मुझे खुद भयंकर उबाऊ लगने लगीं। मैंने चुपके से लेख के क़ाग़ज़ों को एक ओर रख दिया। किसी ने ध्यान तक नहीं दिया।

कुमारजी : सिर्फ कलाकृति ही नहीं, ठेठ प्रकृति की ओर कैसे देखा जाए, ये मुझे गुरुजी ने ही सिखाया। भीमबेटका, अजंता-एलोरा, दक्षिण के मन्दिर, गुरुजी के साथ देखते-देखते मुझे दृष्टि मिली। उससे पहले सिर्फ कान थे, सुर समझता था। उनसे दोस्ती होने के पहले पेड़ों के पत्ते देखता था, दरवाज़ों पर लगे ताले देखता था, केतली से चाय पीता था। लेकिन पीपल का पत्ता और अलीगढ़ी ताला साक्षात गणेशजी हैं, यह बात कभी दिमाग़ में ही नहीं आई थी – और केतली में तो मुकुटधारी गजानन के दर्शन! गुरुजी की रेखा मुझे महान गायक रामकृष्णबुवा वझे की याद दिलाती है। वझेबुवाकी तान सुनते वक़्त लगता था जैसे फ़ौलादी भाले को भीगी हुई धोतीसा निचोड़ रहे हैं। वही ताक़त गुरुजी की रेखा में है। स्वयंको असामान्य समझनेवालों की असलियत क्या है ये गुरुजी पलभर में समझ जाते हैं, लेकिन न उसे उसका उथलापन दिखाते हैं न उसकी गैरहाज़िरी में उसकी निन्दा करते हैं। हम इसी पर चिढ़ जाते हैं। भड़कते भी हैं। गुरुजी से पूछते हैं कि क्या बेहद बेवकूफ़ नहीं है वो? गुरुजी का पेटंट जवाब, "अरे यार, मैं कूड़ा-कर्कट में से सुन्दर आकार सँवारता हूँ, तो जीते-जागते मनुष्य को कैसे रिजेक्ट कर दूँ?"

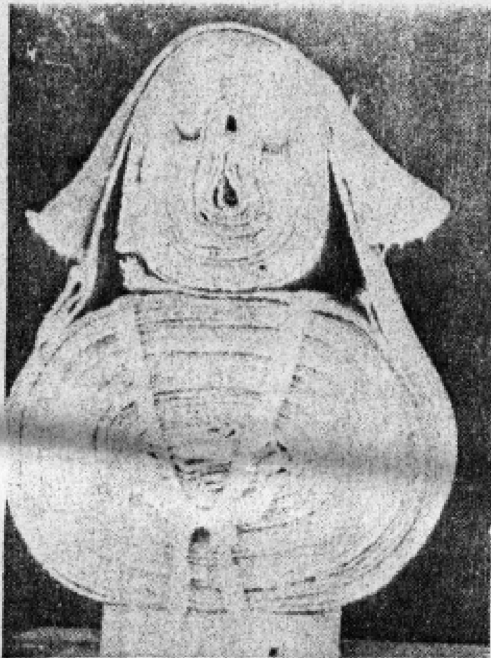




गुरुजी : यार ऐसा है,
कि कलाप्रासाद के सोपान चढ़कर
शिखरस्थ होने की महत्वाकांक्षा कभी रही
ही नहीं। वैसे भी मुझमें एक कमज़ोरी है -
Vertigo - ऊँचाई पर चढ़ा कि मुझे चक्कर आने लगते हैं। एक आर्किटेक्ट की बात अभी याद आई। वे बहुमंज़िले मकान बनाते हैं। उनका कहना है कि ऊपर रहनेवालों में एक प्रकार की मानसिक विकृति आ जाती है। कारण स्पष्ट है। मिट्टी से रिश्ता टूट जाता है। सही मायने में ये ऊँचे फ्लेटों में रहने वाले ही भूमिहीन हैं।

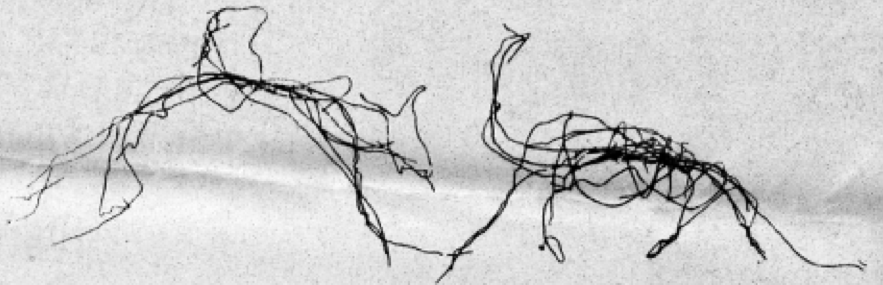
मैं माटी की उपज हूँ और माटी से ही गुफ़्तगू करता आया हूँ। कुछ लोगों का खयाल है कि मिट्टी में ही मिल गया हूँ, बिलकुल धराशायी हो गया हूँ। विजय तेंडुलकर ने मेरा काम देखकर कहा था," गुरुजी, आप में एक ही कमी है। वह है महत्वाकांक्षा का अभाव। नहीं तो आप कहीं के कहीं पहुँच जाते।" मैं सोचता हूँ, नाम और शोहरत हो जाती तो क्या होता? मेरे नाम की एक आर्ट गैलरी खड़ी हो जाती। मगर मेरे चारों ओर प्रकृति ने नितांत सुरूप और सुदर्शन गैलरियाँ खड़ी कर दी हैं। वे सब मेरी अपनी ही तो हैं। उनमें मज़े से घूमो-फिरो, देखो और आनन्द लो। लोगों की नज़रों में बेकार और बेकाम पड़ी छोटी-छोटी चीज़ों में मुझे मकसद दिखाई देने लगा है। मूंगफली के छिलके और फ़र्श पर जमी काई में मनोहारी कला छुपी है यह अहसास मुझे हुआ है। इन चीज़ों से भी जब प्यार हो गया तो मनुष्य को ठुकराना असम्भव बात हो गई।



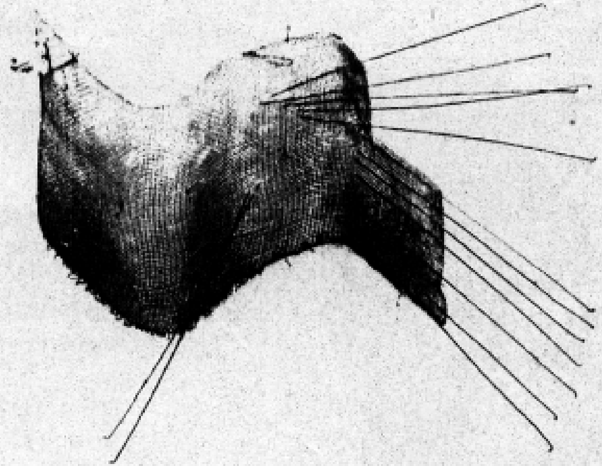


और जब बाबा आमटे से मुलाक़ात हुई तो मेरे अहंकार का फोड़ा फूट गया । वे कितने महान कलाकार हैं । अन्य कलाकारों के साधन हैं उनके साज़ या रंग या घुंघरू । बाबा ने खुद इन्सान को ही साधन बनाया है जीवित होकर भी खण्डहर बने कुष्ठरोगियों से उन्होंने एक असीम क्षमता की कलाकृति गढ़ दी । इन्सान को माध्यम बनाना बहुत मुश्किल है । हमारे माध्यम प्रतिरोध नहीं करते । शिल्पकार जैसा चाहे वैसा आकार देता है मिट्टी को । बाबा का माध्यम इच्छाशक्ति रखता था । निराश मगर अक्खड़ माध्यम था वह । तो बाबा से मिलने के बाद जो कुछ अहम् की हवा थी वह भी फुस्स हो गई ।

पाण्डु : मगर गुरुजी, बाबा से तो आप अभी-अभी मिले। और रंग, ब्रश और केनवास से संन्यास लिए तो आपको बीस से अधिक वर्ष हो चुके ।



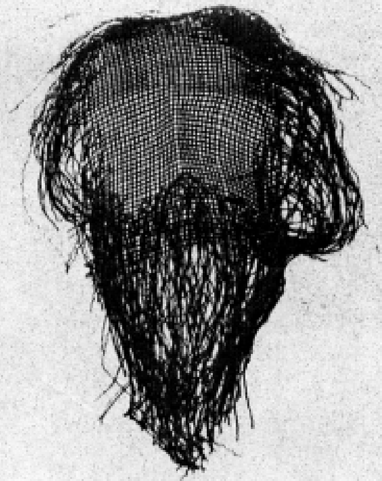




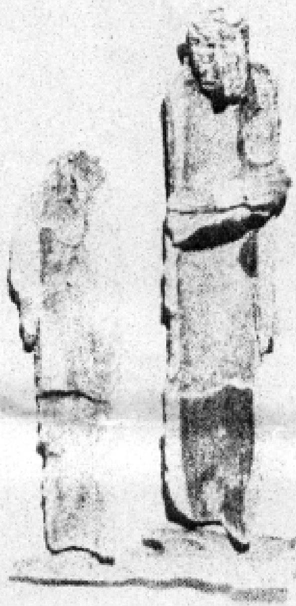


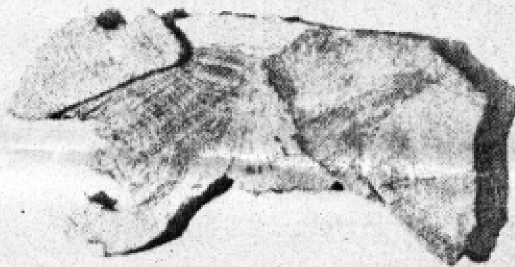
गुरुजी : हर कलाकार की क्षमता का एक सीमा-बिन्दु - Saturation Point होता है। उस अदृश्य बिन्दु तक ही उसके प्रयास का प्रवास चलता है। फिर तो एकसुरी रटंत शुरु हो जाती है। मगर, सीमा-बिन्दु को छू कर भी गायक गाता रहता है, नर्तक नाचता रहता है। एक तो जीने के लिए पैसों की आवश्यकता रहती है, दूसरे कमाई हुई प्रतिष्ठा बरक़रार रखने की आकांक्षा कचोटती रहती है।

जब मुझे पता चला कि मेरी प्रतिभा आविष्कार के सीमा-बिन्दु को स्पर्श कर चुकी है तो मुझे चित्र बनाने में लुत्फ़ रहा ही नहीं । कला का जो 'नवनवोन्मेषशाली' स्वरूप रहता है, वह खत्म हो चुका था । तब केनवास पर लीपा-पोती करते रहने में क्या तुक थी ? पिछले पैंतीस वर्षों में अगर मैं पैंतीससौ चित्र भी बनाता तो सिर्फ रंगों की बौछार और केनवास के फ्रेम में थोड़ी बहुत तब्दीली कर पाता । और वह कला नहीं हुई यार । हुआ सिर्फ़ क्राफ़्ट । इसलिए मैं सीमित दायरे में जकड़ी हुई चित्रकला से पल्लू छुड़ाकर मुक्त रूप से फैली कला खोजने लगा ।



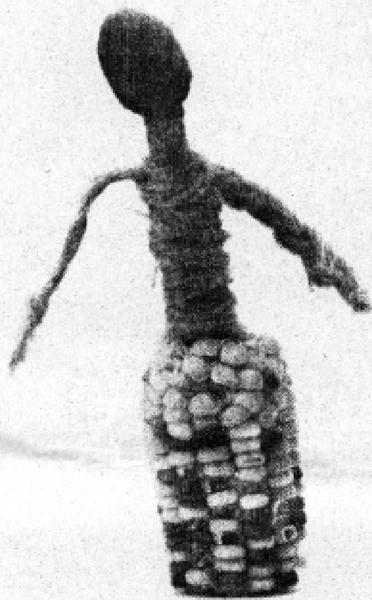
मैं : आपने यह मुझे भी कहा था गुरुजी, इसलिए तो उस अमेरिकन युवक स्टीव को आपसे मिलवाने के लिए इन्दौर बुलवाया था ।





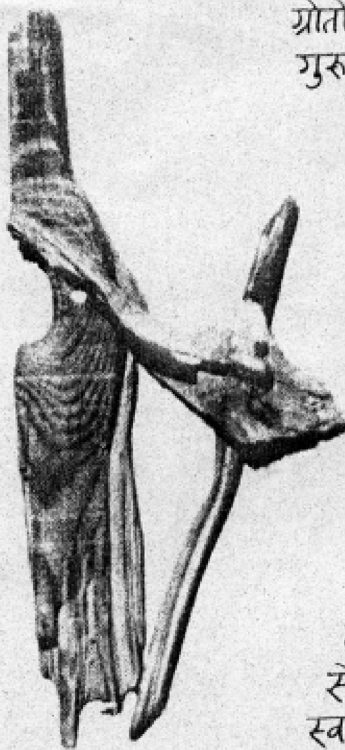




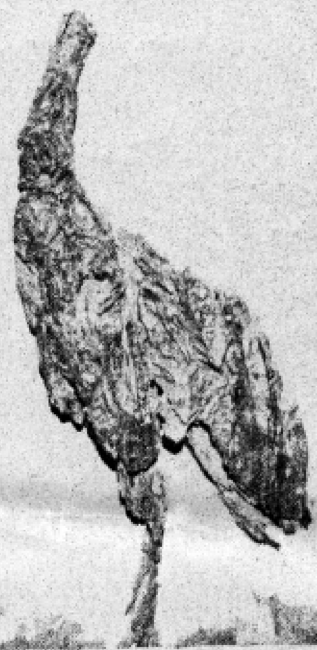


पंदू : वसंत, ये स्टीव कौन ?

मैं : तुम, भाई और राहुलजीने ग्रोतोवस्की का नाम सुना ही होगा। उस महान पोलिश रंगकर्मी ने अमेरिका में दौलत और शोहरत की बुलन्दी हासिल करने के बाद एक दिन बग़ावत कर दी। उसे अचानक महसूस हुआ कि इसी एक चक्र में मरते दम तक घूमते रहना फ़िज़ूल है। एक ही उम्र में वह दो जिन्दगियाँ बसर करना चाहता था। नाम और धन छोड़ वह पोलैण्ड लौटकर तंत्र, योग, वूडू (voodoo) आदि माध्यमों से अपने सीमा-बिंदु को लांघने की कोशिश में भिड़ गया। उसी का एक चेला था ये स्टीव। और गुरुजी आपसे मिलकर, आपका घर देखकर सीधे आपके चरणों में लोट गया था। बोला था, "मेरे गुरु



ग्रोतोवस्की जिस प्रक्रिया में फिलहाल हैं उसमें आप परिपूर्णता प्राप्त कर चुके हैं।"
गुरुजी : अरे काहे की परिपूर्णता ? मैं भी प्रकिया के दौर से ही गुज़र रहा हूँ। एक ही कला में पारंगत होने के बजाय तमाम कलाओं की खिड़कियाँ खोलने की फ़िराक़ में हूँ।
कुमारजी : इसीलिए मैं कहता हूँ कि गुरुजी साधक हैं। साधक हमेशा अपने को भीड़ से जुदा रखता है और भीड़ को भी चाहिए कि साधक से दूर रहे।
मैं : मगर भीड़ तो घेरती है ना गुरुजी को। और वो भी फ़रमाइशों के साथ
भाई : मैं तो ये कहूँगा कि आम जनता ने उन्हें अपने में से एक माना है। इसी का प्रमाण है ये। धरातल से सम्पर्क छोड़कर गुरुजी कहीं अन्तराल में नहीं जा बसे हैं।
गुरुजी के लिए तो वह पानी और बर्फ़ की उपमा एकदम सटीक है। बर्फ़ पानी से ही बनता है ना ? पानी का वह सघन स्वरूप पानी में तैरते समय सिर्फ़ ज़रा सा ही ऊपर मुँह किए रहता है। उसका ७/८ वाँ हिस्सा जलराशि में ही डूबा रहता है।
कलाकार भी बर्फ़ है। आम आदमी से बने एक कलाकार को जनमन में ही रहना चाहिए।
मैं : वाह! क्या बात कही भाई आपने।
भाई : अच्छा, आगे तो पढ़ो।
मैं : अब पढ़ने को बचा ही क्या है !



● वसन्त पोतदार

आलेख : वसन्त पोतदार
छायाचित्र : भालु मोन्ढे
प्रस्तुति : दिलीप चिंचालकर

प्रकाशक : श्रीराम तिवारी
प्रकाशन अधिकारी
मध्यप्रदेश कला परिषद्
टैगोर मार्ग
भोपाल

छपाई : नईदुनिया प्रिंटरी
इन्दौर

